IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कालिदास के गो विशयक विशिट प्रयोग

डॉ० अर्चना पाल,
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा
आर०सी०ए० गर्ल्स (पी०जी०) कॉलेज, मथुरा।

सार –

प्रत्येक कवि का अपना परिवे"ा होता है, जिसमें रहकर जीवन–यापन करते हुए वह काव्य–रचना करता है। उस परिवे"ा से वह न केवल भावों और विचारों को ग्रहण करता है, अपितु भाब्दों को भी ग्रहण करता है। जिन प्राचीन ग्रन्थों का कवि पर प्रभाव होता है, उनसे लेकर भी वह वह बहुत से भाब्दों का प्रयोग करता है, चाहे वे भाब्द उसके काल की भाशा में सामान्यतया प्रचलित न रहे हों। कवियों द्वारा अपनी परिस्थितियों से प्रभावित होकर कुछ दे"ाज भाब्द भी ग्रहण कर लिये जाते हैं।

कालिदास द्वारा भी अपनी कृतियों में बहुत से ऐसे भाब्द प्रयुक्त किये गये हैं, जो या तो उनके अपने परिवे"ा से लिये हुये हैं, या रामायण, महाभारत, पुराणों आदि से अथवा अन्य प्राचीन ग्रन्थों से लिये गये हैं। अपने भाशिक ज्ञान को प्रदर्"ित करने की भावना से भी कालिदास द्वारा कुछ प्राचीन भाब्द, जो सामान्यतया उनके काल में प्रचलन में नहीं थे, प्रयुक्त किये गये हैं। गो विशयक कुछ दे"ाज भाब्द भी ग्रहण किये गये हैं। ऐसे भाब्दों के प्रयोगों को कालिदास के वि"ाश्ट प्रयोग कहा जा सकता है।

किन्हीं धार्मिक भावनाओं के प्रभाव से अथवा किन्हीं अन्य संस्कारों के प्रभाव से कालिदास का गो के प्रति भाक्ति–भाव दिखाई पड़ता है। इस भक्तिभाव को कालिदास ने रघुव"ा में राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा द्वारा गो–सेवा कराकर प्रदर्"ित किया है। इस प्रसंग में कालिदास ने ''गो'' से सम्बन्धित बहुत से ऐसे भाब्दों का प्रयोग कर दिया है, जो सामान्यतया लौकिक संस्कृत के अन्य कवियों की कृतियों में प्रयुक्त नहीं हुए हैं। इनमें से कुछ भाब्द तो कालिदास के काल में भाशा में प्रचलित रहे होंगे, भले ही साहित्य में उनका प्रयोग न हो पाता हो। कुछ भाब्द प्राचीन हैं, जिन्हें पाणिनि द्वारा भी व्याकरण के वि"ोश नियमों से विहित किया गया है। ''कुण्डोध्नी'', ''घटोध्नी'', ''गृश्टि'', ''ओधस्य'' जैसे भाब्द कालिदास द्वारा जानबूझ कर प्रयुक्त किये गये प्रतीत होते हैं। कालिदास ने यद्यपि ''मक्खन'' के लिये मालविकग्निमित्र में ''नवनीत'' भाब्द का भी प्रयोग किया है, रघुव"ा में ''हैयङ्गवीन'' भाब्द का प्रयोग वि"ोश रूप से कियागया प्रतीत होता है।

प्रस्तावना –

कालिदास की कृतियों में प्रयुक्त ''गो'' आदि से सम्बन्धित कुछ भाब्दों को यहाँ दिया जा रहा है। इनमें से कई तो वैदिक काल से चले आये हैं, कई ऐसे हैं जिनकी सिद्धि के लिये पाणिनी को भी वि"ोश सूत्रों की रचना करनी पड़ी थी। ''गो'' से सम्बन्धित भाब्दों के अन्य प्रमुख संस्कृत किवियों की अपेक्षा, कालिदास की कृतियों में अधिक मिलने से कालिदास की वि"िाश्ट स्थिति हो जाती है।

कुण्डोध्नी

कालिदास ने ''कुण्डोध्नी'' स्त्री0 भाब्द का प्रयोग ''कूडे के समान बाँक वाली गाय'' के लिये किया है –

भुवं कोश्णेन कुण्डोध्नी मेध्येनावभृथादपि । रघु0 । . 84

यहाँ पुश्ट बाँक वाली नन्दिनी गाय को ''कुण्डोध्नी'' कहा गया है। मल्लिनाथ ने अपनी व्याख्या में कहा है – कुण्डमिवोध आपीनं यस्याः सा कुण्डोध्नी।

पाणिनि के काल में ''कुण्डोध्नी'' भाब्द संस्कृत भाशा में प्रचलित रहा होगा। इसी कारण पाणिनि को इसकी सिद्धि के लिये सूत्रों की रचना करनी पड़ी। अश्टा0 5 . 4 .। 3। में कहा गया है – ऊधसो ऽ नड्.–''ऊधस्–"ाब्दान्त बहुव्रीहि को समासान्त अनड्. आदे"ा होता है''। समासान्त में स्त्री0 में ड.ोश् प्रत्यय के विधान के लिये सूत्र है – बहुव्रीहेरूधसो ड. ोश्–''बहुव्रीहि–समास में वर्तमान ऊधस्–"ाब्दान्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिड्.ग में ड.ोश् प्रत्यय होता है'' अश्टा0 4 .। . 25 । यह उल्लेखनीय है कि ''बाँक'' अर्थ में ''ऊधस्'' भाब्द बहुत प्राचीन है। कई भारत–यूरोपीय भाशाओं में इसके सजातीय भाब्द इसी अर्थ में पाये जाते हैं, जैसे – लैटिन Uber प्राचीन हाई जर्मन Utar आधुनिक जर्मन Euter; आधुनिक अंग्रज़ी Udder.

''कुण्डोध्नी'' भाब्द को, जो संस्कृत में प्राचीन काल से चला आया प्रतीत होता है, कालिदास ने रघुव"ा में प्रयुक्त करके साहित्यिक भाशा में व्यवहृत कर दिया। मोनियर विलियम्स और आप्टे ने अपने को"ाों में ''कुण्डोध्नी'' भाब्द के प्रयोग के विशय में केवल रघु0 । दृ 84 का उल्लेख किया है। अतः सम्भवतः लौकिक संस्कृत के किसी अन्य कवि द्वारा इस भाब्द का प्रयोग नहीं किया गया है।

घटोध्नी

''कुण्डोध्नी'' के समान ही कालिदास ने ''घटोध्नी'' भाब्द का भी प्रयोग किया है– गाः गोटि"ाः स्प"ार्यता घटोध्नीः – ''करोडों घड़े के समान बाँक वाली गायों को देते हुए आप के द्वारा'' रघु0 2 . 49. – ''घटोध्नी'' भाब्द की भी सिद्धि ''कुण्डोध्नी'' के समान ही की जाती है – घट इव ऊधोऽस्याः सा घटोध्नी – ''घड़े के समान बाँक वाली''। यहाँ भी ''ऊधसोऽनड्.'' अश्टा0 5.4.। 3। के अनुसार समासान्त अनड्. आदे"ा और ''बहुव्रीहेरूधसो ड.ोश्'' अश्टा0 4 .। . 25 के अनुसार स्त्रीलिड्.ग में ड.ोश् प्रत्यय होकर ''घटोध्नी'' भाब्द की निश्पत्ति मानी जाती है। संस्कृत में ''घटोध्नी'' भाब्द के विशय में मोनियर विलियम्स और आप्टे दोनों द्वारा केवल रघु0

2 . 49 उल्लेख किया गया है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि अन्य संस्कृत कवियों की रचनाओं में यह भाब्द प्रयुक्त नहीं है।

गृश्टि

कालिदास ने ''गृश्टि'' स्त्री0 भाब्द का प्रयोग ''एक बार ब्याई हुई गाय'' के लिये किया है –

आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद् गृश्टिर्गुरूत्वाद्वपुशो नरेन्द्रः। रघु0 2 .। 8

मल्लिनाथ ने अपनी व्याख्या में हलायुध–को"ा को उद्धृत करते हुए कहा है – गृश्टिः सकृत्प्रसूता गौः।

वस्तुतः ''गृश्टि'' वैदिक भाब्द है। ऋग्वेद 4 . । 8 .। 0, अर्थवेद आदि में इसका प्रयोग ''एक बाद ब्याई हुई गाय'' के लिये मिलता है। मोनियर विलियम्स ने अपने को"ा में इस भाब्द के प्रयोग के विशय में ऋग्वेद, अर्थवेद, कौ"ातकी ब्राह्मण, महाभारत आदि का तो उल्लेख किया है, किन्तु लौकिक संस्कृत के किसी काव्य–ग्रन्थ का उल्लेख नहीं किया है। आप्टे ने अपने को"ा में केवल रघु0 2 .। 8 और मृच्छकटिक 3 का उल्लेख किया है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि लौकिक संस्कृत साहित्य में ''गृश्टि'' भाब्द का प्रयोग विरल रहा है। एक प्राचीन भाब्द को, जो संस्कृत में वैदिक काल से चला आया है, साहित्यिक व्यवहार में लाने का श्रेय कालिदास को है।

''कडङ्गरीय भाब्द ''भुस'' के वाचक ''कडङ्गर'' से छ प्रत्यय करके निश्पन्न माना जाता है। अमरको"ा 2 . 9 दृ 22 में कहा गया है – कडङ्गरो बुसं क्लीवे।

''कडङ्गरीय'' भाब्द के प्रयोग के विशय में आप्टे ने अपने को"ा में केवल उपर्युक्त रघु0 5 . 9 के प्रयोग को उद्धृत किया है। मोनियर विलियम्स ने भी केवल रघु0 5 . 9 का सन्दर्भ दिया है।

पाणिनि ने ''कडङ्गरीय'' भाब्द की सिद्धि के लिये ''कडङ्गराच्छ च'' अश्टा0 5 .। .69 सूत्र का विधान किया है, जिसका अर्थ है – ''द्वितीयासमर्थ'' ''कडङ्गर'' और ''दक्षिणा'' भाब्दों से ''अर्हति'' अर्थ में छ प्रत्यय तथा विकल्प से यत् प्रत्यय होता है'' – कडङ्गरमर्हति कडङ्गरीयो गौः, कडङ्गर्यः। ऐसा प्रतीत होता है कि दे"ाज भाब्द को ग्रहण करके पाणिनि ने अपने व्याकरणिक ढांचे में ''कडङ्गरीय'' और ''कडङ्गर्य'' भाब्दों की सिद्धि प्रद"ार्ति कर दी। बाद में कालिदास ने इस मूलतः दे"ाज भाब्द ''कडङ्गरीय'' को रघु0 5 . 9म प्रयुक्त कर दिया। अन्य कवियों द्वारा इस भाब्द के प्रयोग के उदाहरण नहीं मिलते हैं।

यह उल्लेखनीय है कि हिन्दी की खड़ी बोली में घास, भुस आदि खाने वाले गाय, भैंस आदि प"ाुओं को ''डंगर'' कहा जाता है, जो ''कडङ्गरीय'' का ही तद्भव प्रतीत होता है।

वत्स – वत्सतर

कालिदास ने ''वत्स'' पुं0 भाब्द का प्रयोग कुमारसम्भव और रघुवं"ा में ''बछड़ा'' अर्थ में किया है–

यं सर्व"ौलाः परिकल्प्य वत्सम्। कुमार0 । . 2
वत्सालोकप्रवर्तिना। रघु0 । . 84

इसी प्रकार कालिदास ने ''बड़े बछड़े'' के लिये ''वत्सतर'' पुं0 भाब्द का प्रयोग किया है।

महोक्षतां वत्सतरः स्पृ"ान्निव। रघु0 3 . 32

यह उल्लेखनीय है कि ''वत्स'' भाब्द का मूल अर्थ ''बछड़ा'' ही था। ऋग्वेद आदि प्राचीन ग्रन्थों में ''वत्स'' भाब्द का ''बछड़ा'' अर्थ में प्रचुर प्रयोग हुआ है। लौकिक संस्कृत में ''वत्स'' का ''बेटा'' अर्थ ''बछड़ा'' अर्थ से ही विकसित हुआ है। अभिज्ञान"ाकुन्तल में कई स्थलों पर ''बेटा'' अर्थ में ''वत्स'' और ''बेटी'' अर्थ में ''वत्सा'' सम्बोधन–''वत्से'' का कई स्थलों पर प्रयोग हुआ है।

महोक्ष

कालिदास ने ''महोक्ष'' पुं0 भाब्द का ''बड़े बैल'' के लिये प्रयोग किया है –

महोक्षतां वत्सतरः स्पृ"ान्निव। रघु0 3 . 32
लीलाखेलमनुप्रापुर्महोक्षास्तस्य विक्रमम्। रघु0 4 दृ 22
महेन्द्रमास्थाय महोक्षरूपम्। रघु0 6 दृ 72

आप्टे ने अपने संस्कृत को"ा में ''महोक्ष'' भाब्द के प्रयोग के विशय में रघुवं"ा के उपर्युक्त स्थलों के अतिरिक्त ि"ा"ापालवध 5 . 63 का भी सन्दर्भ दिया है। मोनियर विलियम्स ने भी अपने को"ा में भातपथ–ब्राह्मण आदि और रघुवं"ा का सन्दर्भ दिया है।

सहायक पुस्तकों की सूची

1. अभिज्ञान"ाकुन्तलम् – सं0 डा0 कपिलदेव द्विवेदी, पंचम संस्करण 1969, रामनारायण लाल बेनीमाधव, इलाहाबाद।

2. ऋतुसंहारम् – व्याख्याकार पं0 लक्ष्मीप्रपन्नाचार्य, प्रथम संस्करण, 1977, चौखम्बा अमरभारती प्रका"ान, वाराणसी।

3. कुमारसम्भवं महाकाव्यम् (सञ्जीवनी – चन्द्रकला – हिन्दी व्याख्योपेतम्) सं0 एवं व्याख्याकार पं0 भोशराज भार्मा रेग्मी प्रथमसंस्करण 1987, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।

4. मेघदूतम् – सं.डा. संसारचन्द्र तथा पं0 मोहनदेव पंत, अश्टम संस्करण 1983, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

5. रघुवं"ाम् – व्याख्याकार डा0 श्रीकृश्णमणि त्रिपाठी, तृतीय संस्करण 1983, चौखम्बा सुरभारती प्रका"ान, वाराणसी।

6. विक्रमोर्व"ीयम् – सं0पं0 श्रीरामचन्द ंमिश्र, चतुर्थ संस्करण, 1983 चौखम्बा अमरभारती प्रका"ान वाराणसी।

7. मालविकाग्निमित्रम् – व्याख्याकार, डा0 रमा"ांकर पाण्डेय, तृतीय संस्करण 1989, चौखम्बा सुरभारती प्रका"ान, वाराणसी।

8. डा0 कर्णसिंह : भाशा विज्ञान, साहित्य भण्डार, मेरठ।